अभियुक्त ने परिवीक्षा की अवधि पूरी कर ली थी। बांड की किसी भी शर्त की किसी भी शिकायत या उल्लंघन का कोई अवसर नहीं था। इस समय हम किसी अन्य सजा का सहारा लेना उचित और उचित नहीं समझते हैं। हमारे विचार में, उच्च्य न्यायालय के फैसले के खिलाफ शिकायतकर्ता द्वारा दायर 1999 की दाण्डिक अपीलीय (आई. डी. 1) में कोई सार नहीं है और उसे तदनुसार खारिज कर दिया जाता है।"

(20) इस मामले को ध्यान में रखते हुए, चूंकि प्रतिवादी ने बांड की शर्तों का उल्लंघन किए बिना परिवीक्षा की अवधि पहले ही पूरी कर ली है, इसलिए मुझे घड़ी को पीछे रखने और निचली निचली अदालत को परिवीक्षा अधिकारी की रिपोर्ट मांगने और फिर परिवीक्षा का लाभ बढ़ाने का निर्देश देने का कोई आधार नहीं मिलता है। पूर्वगामी कारणों से, यह पुनरीक्षण याचिका किसी भी योग्यता से रहित होने के कारण खारिज कर दी जाती है।

पी. एस. बाजवा

एम. एम. कुमार और रितु बहरी से पहले, जे. जे.

भारत का संघ अन्य का संघ-याचिकाकर्ता

बनाम

दयानंद पंडोरा और एक अन्य, का उत्तरदाता

सी. डब्ल्यू. पी. सं. 13100--2008

18 अप्रैल, 2011

भारत का संविधान, अनुच्छेद 226/227 और 311; केंद्रीय सिविल सेवा (आचरण) नियम, 1964-आरएल. 3 (1) (ii), 3 (1) (iii), 15 (2) और 34 (1) (i)-ऐसी स्थिति से निपटता है जब अनुशासनात्मक प्राधिकरण आरोप के लेखों पर पूछताछ अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होना पसंद करता है-अनुशासनात्मक प्राधिकरण के लिए अनिवार्य है कि वह जांच अधिकारी द्वारा जांच रिपोर्ट में दर्ज निष्कर्षों से असहमत होते हुए 'असहमति नोट' दर्ज करे और फिर यदि रिकॉर्ड पर साक्ष्य इस उद्देश्य के लिए 'पर्याप्त' है तो आरोप पर अपने स्वयं के निष्कर्ष दर्ज करे-नियमों की एक आवश्यक आवश्यकता-याचिका खारिज।

आयोजित, नियम 15 का वह उप-नियम (2) एक ऐसी स्थिति से संबंधित है जब अनुशासनात्मक प्राधिकरण आरोप के लेखों पर पूछताछ अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होना पसंद करता है। ऐसी स्थिति में, अनुशासनात्मक प्राधिकरण इस तरह की असहमति के लिए अपना कारण दर्ज करने के लिए बाध्य है और फिर इस तरह के आरोप पर अपने स्वयं के निष्कर्ष दर्ज करता है यदि रिकॉर्ड पर साक्ष्य इस उद्देश्य के लिए 'पर्याप्त' है। जांच प्राधिकरण के निष्कर्ष के साथ असहमति के मामले में अनुशासनात्मक प्राधिकरण को असहमति के अपने कारणों को दर्ज करने की आवश्यकता थी और फिर इस उद्देश्य के लिए रिकॉर्ड पर साक्ष्य पर्याप्त होने की स्थिति में ऐसे आरोप पर अपना निष्कर्ष दर्ज करना अनिवार्य था। अनुशासनात्मक प्राधिकरण पर लगाया गया दायित्व अधिक भारी है क्योंकि अभिलेख पर साक्ष्य ऐसी किसी भी असहमति पर निष्कर्ष को बनाए रखने के लिए 'पर्याप्त' होना चाहिए, जिसे अनुशासनात्मक प्राधिकरण दर्ज करने के लिए आगे बढ़ सकता है। आम तौर पर आरोप को बनाए रखने के लिए पर्याप्तता और साक्ष्य की अपर्याप्तता एक ऐसा प्रश्न होगा जिसमें जाने की आवश्यकता नहीं होगी, लेकिन नियम अनुशासनात्मक प्राधिकारी पर एक आरोप पर निष्कर्ष दर्ज करने का दायित्व लगाता है जहां वह केवल तभी असहमति व्यक्त करता है जब रिकॉर्ड पर साक्ष्य उस उद्देश्य के लिए 'पर्याप्त' हो। यह इस कारण से हो सकता है कि एक बार पूछताछ करने वाले प्राधिकरण ने एक या दूसरे तरीके से निष्कर्ष निकाला है तो उन निष्कर्षों को उलटने के लिए पर्याप्त सबूत की आवश्यकता होगी। इसलिए, निष्कर्षों को कमजोर साक्ष्य पर उलट नहीं किया जा सकता है। आरोपों को बनाए रखने के लिए वस्तुतः कोई सबूत पर चर्चा नहीं की गई है और न ही इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कोई तर्क अपनाया गया है कि आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 उन आरोपों का दोषी है। (पैरा 12 और 13)

भारत का संविधान, अनुच्छेद 14,226/227 और 311; केंद्रीय सिविल सेवा (आचरण) नियम, 1964, नियम 14 और 16-विभागीय पूछताछ-भेदभाव-15 डाकघरों में की गई धोखाधड़ी-25-30 अधिकारियों ने नियम 16 के तहत समान आरोपों के साथ आरोप पत्र जारी किए जबकि आवेदक (प्रतिवादी) ने नियम 14 के तहत आरोप पत्र जारी किया-आवेदक (प्रतिवादी) और अन्य कर्मचारियों के खिलाफ लगाए गए आरोपों के बीच कोई अंतर दिखाने वाली कोई सामग्री नहीं-न्यायाधिकरण का निष्कर्ष कि आवेदक (प्रतिवादी) समान व्यवहार के योग्य है।

अभिनिर्धारित किया कि न्यायाधिकरण ने भेदभाव के इस मुद्दे पर याचिकाकर्ताओं द्वारा किसी विशिष्ट उत्तर की अनुपस्थिति में में उनके खिलाफ प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला है। इस न्यायालय के समक्ष भी याचिकाकर्ता समर्थ नहीं हुए हैं

आवेदक-प्रत्यर्थी संख्या 1 और अन्य आरोपित कर्मचारियों के खिलाफ लगाए गए आरोपों के बीच कोई अंतर दिखाने वाली किसी भी सामग्री को रिकॉर्ड पर रखना।तदनुसार, हम पाते हैं कि न्यायाधिकरण सही निष्कर्ष पर पहुंचा है कि आवेदक प्रतिवादी संख्या 1 भी इसी तरह के व्यवहार का हकदार था।इस प्रकार, याचिकाकर्ताओं का यह तर्क कि आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा कोई भेदभाव नहीं किया गया था, आधार नहीं रखता है।

(पैरा 16)

भारत का संविधान, अनुच्छेद 226/227 और 311; केंद्रीय सिविल सेवा (आचरण) नियम, 1964, नियम 14,16,34 (1) (i), 3 (1) (ii) और 3 (1) (iii)-आरोप-पत्र में मौद्रिक नुकसान या गबन के किसी भी आरोप की अनुपस्थिति में में-वसूली लगाने की सजा कानून की नजर में टिकाऊ नहीं है।

अभिनिर्धारित किया गया कि वर्तमान मामले में जब आरोप-पत्र में न तो मौद्रिक नुकसान का कोई आरोप था और न ही अनुशासनात्मक प्राधिआरोप-पत्रण द्वारा कोई निष्आरोप-पत्रष निकाला गया था कि आवेदक प्रतिवादी संख्या 1 ने दुरुपयोग किया था, तो वसूली लगाने वाली सजा कानून की नजर में अस्थिर है।M.V.Bijlani बनाम भारत संघ (2006 (5) SCC 88) के मामले में दिए गए फैसले पर निर्भर।

(पैरा 17 और 18)

भारत का संविधान, अनुच्छेद 226/227 और 311; केंद्रीय सिविल सेवा (आचरण) नियम, 1964, नियम 34 (1) (i), 3 (1) (ii) और 3 (1) (iii)-आवेदक (प्रतिवादी) पर लगाए गए दो दंड-दंड के बंडल की राशि-कानून में गलत।

ऐसा माना गया है कि वेतन वृद्धि की तारीख से तीन महीने की अवधि के लिए वेतन वृद्धि के समय में एक चरण के लिए 5,875/- रुपये से घटाकर 5,750/- रुपये आदेश का जुर्माना लगाया गया है। उन्हें कटौती की अवधि के दौरान वेतन वृद्धि अर्जित करने से रोक दिया गया था और उसी आदेश में दस महीने की अवधि के लिए मूल वेतन के एक चौथाई की वसूली का एक और जुर्माना लगाया गया है।दूसरे शब्दों में, आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 पर दो दंड लगाए गए हैं, जो हमारी राय में दंड के बंडल के बराबर है।इसलिए, याचिकाकर्ताओं द्वारा की गई कार्रवाई

आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 पर दंड का बंडल लागू करना कानून की दृष्टि से गलत है।भारत संघ बनाम एस. सी. पाराशर (2006) 3 एस. सी. सी. 167 मामले में लिए गए निर्णय के पैरा 12 पर आधारित।

(पैरा 19)

याचिकाकर्ताओं की ओर से अधिवक्ता नमित कुमार ने कहा,आर. के. शर्मा, अधिवक्ता, प्रतिवादी संख्या 1 के लिए।

एम. एम. कुमार जे.

(1) भारत संघ और उसके अधिकारियों ने संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत तत्काल याचिका दायर की है, जिसमें केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण की चंडीगढ़ पीठ द्वारा दिए गए आदेश (संक्षिप्तता के लिए, 'न्यायाधिकरण') को चुनौती दी गई है, जिसमें आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 के मूल आवेदन को 23.2.2004 (A-10) और 9.3.2005 (A-13) के आदेशों को दरकिनार करते हुए अनुमति दी गई है।न्यायाधिकरण ने याचिकाकर्ताओं को आगे निर्देश दिया है कि वे आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में लाभों को बहाल करने के आदेश पारित करें, जिसमें उनकी निलंबन अवधि से संबंधित लाभ शामिल हैं, जिसे सभी इरादों और उद्देश्यों के लिए कर्तव्य पर खर्च की अवधि माना जाता है।

(2) निर्विवाद तथ्य यह है कि आवेदक-उत्तरदाता संख्या 1 उप-पोस्टमास्टर के रूप में काम कर रहा था और एन. एच.-2 फरीदाबाद डाकघर में तैनात था।आई. डी. 1 पर, केंद्रीय सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1965 (संक्षिप्तता के लिए, 'नियम') के नियम 14 के तहत उन पर एक आरोप पत्र जारी किया गया था।संक्षेप में उनके खिलाफ लगाए गए आरोप थे कि आईडी1 पर उन्होंने रितु कपूर, करण कपूर और आर. के. सिंह के नाम पर तीन आर. डी. खाते खोलने की अनुमति दी, जिन्हें सेक्टर 16, फरीदाबाद से स्थानांतरित आर. डी. खाते के रूप में दिखाया गया था, जिसमें प्रत्येक खाते में 64,000/- की शेष राशि थी, जबकि प्रत्येक खाते में 4,000/- की वास्तविक शेष राशि थी।इसके अलावा, उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना, उन्होंने प्रत्येक खाते से 20,000/- रुपये निकालने की अनुमति दी।आवेदक-प्रत्यर्थी संख्या 1 के खिलाफ दूसरा आरोप यह था कि उसने उक्त आर. डी. खातों को भुगतान के साथ यानी उक्त खाते खोलने के एक वर्ष के भीतर बंद करने की अनुमति दी, जो प्रासंगिक नियमों का उल्लंघन है।इस प्रकार, यह आरोप लगाया गया कि आवेदक-प्रत्यर्थी संख्या 1 ने आत्यन्तिक सत्यनिष्ठा, कर्तव्य के प्रति समर्पण को बनाए नहीं रखा और केंद्रीय सिविल सेवा (आचरण) नियम, 1964 (ए-2) के नियम 34 (1) (आई), 3 (1) (2) और 3 (1) (3) के प्रावधानों का उल्लंघन करते हुए सरकारी कर्मचारी के अशोभनीय तरीके से काम किया।

(3) आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 के खिलाफ एक नियमित विभागीय जांच शुरू की गई थी। 14.7.2000 पर, पूछताछ अधिकारी ने अपनी रिपोर्ट इस निष्कर्ष पर प्रस्तुत की कि उनके खिलाफ लगाए गए आरोप साबित नहीं हुए (ए-3)।हालाँकि, फरीदाबाद डिवीजन-अनुशासनात्मक प्राधिकरण के डाकघरों के वरिष्ठ अधीक्षक ने जांच रिपोर्ट से असहमति जताई और 17.1.2002 (A-4) दिनांकित एक 'असहमति नोट' दर्ज किया।आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 को 'असहमति नोट' में दर्ज निष्कर्षों के खिलाफ प्रतिनिधित्व करने का अवसर दिया गया था। 1.2.2002 पर, आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 ने एक विस्तृत स्पष्टीकरण (ए-5) प्रस्तुत किया। <आई. डी. 1 पर, अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने आवेदक प्रतिवादी संख्या 1 के खिलाफ एक आदेश पारित किया जिसमें संचयी प्रभाव के साथ दो साल की अवधि के लिए एक वृद्धि को रोकने की सजा दी गई और 'दुरुपयोग की गई राशि' (ए-6) के नुकसान की भरपाई के लिए दस महीने की अवधि में फैले उसके मूल वेतन के एक चौथाई हिस्से की वसूली का निर्देश दिया गया। दिनांकित 15.3.2002 आदेश के खिलाफ आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा दायर अपील को निदेशक, डाक सेवा, हरियाणा सर्कल द्वारा दिनांकित 20.12.2002 आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया गया था।इस आदेश के खिलाफ आवेदक-प्रत्यर्थी संख्या 1 ने मुख्य पोस्टमास्टर जनरल, हरियाणा सर्कल को एक पुनरीक्षण याचिका प्रस्तुत की, जिसे 25.7.2003 के आदेश के माध्यम से अनुमति दी गई थी, जिसमें 15.3.2002 और 20.12.2002 के आदेशों को दरकिनार कर दिया गया था।असहमति के कारणों और अस्थायी निष्कर्षों आदि को दर्ज करने के चरण से नए सिरे से कार्यवाही के लिए मामले को अनुशासनात्मक प्राधिकरण को वापस भेज दिया गया था। (ए-7)।

(4) 6.1.2004 पर, आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 को असहमति के किसी भी कारण का खुलासा किए बिना अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा फिर से एक नया 'असहमति नोट' दिया गया। 20.1.2004 पर, आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 ने उक्त 'असहमति नोट' (ए-9) का एक विस्तृत जवाब प्रस्तुत किया।हालाँकि, 23.2.2004 (A-10) दिनांकित आदेश के अनुसार, आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 को अगली वृद्धि की तारीख से तीन महीने की अवधि के लिए '4500-7000 के वेतन के समय पैमाने में' 5,875/- से '5,750/- तक वेतन में कमी के एक चरण के जुर्माने के साथ भेजा गया था।उन्हें कटौती की अवधि के दौरान वेतन में वृद्धि अर्जित नहीं करनी थी और अवधि समाप्त होने पर वेतन में कमी का भविष्य की वृद्धि को स्थगित करने का प्रभाव नहीं था; मामले में शामिल नुकसान को चुकाने के लिए मूल वेतन का एक चौथाई हिस्सा 10 महीने के लिए वसूल किया जाना था। (5) इसके बाद आवेदक-प्रत्यर्थी संख्या 1 को दिनांकित 28.12.2004 (A-11) का कारण बताएँ नोटिस दिया गया कि उससे उसका निलंबन भत्ता क्यों नहीं वसूला जाए। 26.2.2005 पर, उन्होंने उक्त जवाब कारण दिखाएँ नोटिस प्रस्तुत किया

(ए-12)

इसके बाद, 9.3.2005 पर अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने एक आदेश पारित किया जिसमें 17.10.1997 से 14.5.1998 तक उनके निलंबन को 'गैर-शुल्क' अवधि माना गया और उक्त अवधि के लिए उन्हें कोई वेतन और भत्ते (ए-13) देय नहीं थे।

(6) 23.2.2004 और 9.3.2005 दिनांकित दंड आदेशों को वापस लेने के लिए दिनांकित 23.4.2005 का कानूनी नोटिस और दिनांकित 16.5.2005 (A-14 और A-15) का अनुस्मारक देने के बाद, आवेदक-प्रतिवादी नं. 1 ने ओ. ए. नं. दाखिल करके न्यायाधिकरण का दरवाजा खटखटाया। 913-एच. आर.-2005 अन्य बातों के साथ साथ अन्य बातों के साथ-साथ चार याचिकाएं दायर की गई हैं-(i) जांच रिपोर्ट अन्य बातों के साथ साथ जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों से असहमत होते हुए अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा 'असहमति पत्र' अन्य बातों के साथ साथ कोई कारण दर्ज नहीं किया गया है; (ii) उनके साथ भेदभाव किया गया है, क्योंकि अन्य 25-30 व्यक्तियों, जिनके खिलाफ विभागीय रूप से कार्रवाई की गई है, उन्हें नियमों के नियम 16 के तहत आरोप पत्र जारी किए गए थे, जबकि उनके मामले अन्य बातों के साथ साथ यह नियम के नियम 14 के तहत जारी किया गया था; (iii) विभाग को कोई मौद्रिक नुकसान नहीं हुआ है; और (iv) अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने अवैध रूप से दंड का एक बंडल दिया है, जो पूरी तरह से अनुचित है।

(7) न्यायाधिकरण ने आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में अपने निष्कर्षों को वापस कर दिया और 11.3.2008 (P-4) दिनांकित आदेश के माध्यम से मूल आवेदन की अनुमति दी।न्यायाधिकरण ने पाया कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा दर्ज 'असहमति नोट' में अनिवार्य आवश्यकताओं की कमी थी।यद्यपि अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने असहमति के पाँच कारण दर्ज किए हैं, लेकिन वह आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा लिए गए बचाव को ध्यान में रखने में विफल रहा और उस पर बिल्कुल भी चर्चा नहीं की।न्यायाधिकरण ने आगे पाया कि अपीलीय प्राधिकरण द्वारा पारित दिनांक 1 का आदेश नियमों के नियम 27 (4) का उल्लंघन था।न्यायाधिकरण के अनुसार नए सिरे से कार्यवाही भी उचित नहीं थी क्योंकि यह असहमति के कारणों को दर्ज करने के चरण से शुरू होनी थी।आवेदक प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा प्रस्तुत उत्तर पर विचार नहीं किया गया।अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने केवल 'विचार' अभिव्यक्ति का उपयोग किया है।अपचारी कर्मचारी द्वारा लिए गए बचाव से सहमत नहीं होने के लिए फिर से कारण बताए जाने चाहिए थे।न्यायाधिकरण ने स्पष्ट रूप से देखा है कि दूसरा 'असहमति ध्यान दें', वास्तव में, पिछले असहमति ध्यान दें दिनांक 14.7.2000 की प्रति थी।इस संबंध में, न्यायाधिकरण ने भारत सरकार द्वारा जारी दिनांकित 13.7.1981 निर्देशों पर भरोसा रखा है, जो स्व-निहित, बोलने और तर्कपूर्ण आदेशों को पारित करने के लिए निर्धारित करता है।न्यायाधिकरण ने विभिन्न पक्षों से भी समर्थन प्राप्त किया

प्रबंध निदेशक, ईसीआईएल, हैदराबाद बनाम बी. करुणाकर (1); एमएमआरडीए अधिकारी संघ बनाम एमएमआरडीए (2); एस. एन. के मामलों में दिए गए निर्णय। मुखर्जी बनाम भारत संघ (3); भारत संघ बनाम ई. जी. नंबुदिरी (4); बलविंदर सिंह बनाम पंजाब राज्य (5); हरि सिंह बनाम पंजाब राज्य (6); के. बी. राय बनाम पंजाब राज्य (7) और प्रीतम सिंह बनाम एच. एस. ई. बी. (8)।निष्कर्ष

अन्य मुद्दों पर न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश के पैरा 8 से 10 तक स्पष्ट हैं और प्रासंगिक उद्धरण निम्नानुसार हैः-

“8. ......किसी विशिष्ट उत्तर की अनुपस्थिति में में, यह न्यायालय प्रतिवादी के खिलाफ और आवेदक के पक्ष में प्रतिकूल निष्कर्ष निकालने से वंचित नहीं है कि आवेदक के प्रति भेदभावपूर्ण रवैया प्रतीत होता है और यदि आरोपों के उसी सेट पर अन्य अधिकारियों को केवल मामूली जुर्माना दिया गया है, तो आवेदक भी इसी तरह के व्यवहार का हकदार है।इस बारे में कि प्रतिवादी आवेदक के खिलाफ पूर्वाग्रहपूर्ण क्यों हो गए, आवेदक द्वारा समझाया गया है कि उससे उदार दृष्टिकोण रखने के लिए पैसे की मांग की गई थी और उसे श्री एन. आर. भारद्वाज, पूछताछ अधिकारी और 5 निरीक्षकों आदि द्वारा लिखित रूप में देने के लिए मजबूर और प्रताड़ित किया गया था। शायद इस तरह के आरोपों ने प्रतिवादी को अनुशासनात्मक प्राधिकरण के प्रति पूर्वाग्रहपूर्ण होने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई होगी जो इस आधार पर आगे बढ़ा है कि आवेदक ने जांच के दौरान कुछ तथ्यों को स्वीकार किया था।हालांकि, इस तरह के कथित स्वीकारोक्ति के आधार पर भी जांच अधिकारी ने आवेदक को बरी कर दिया था।इसे देखते हुए, अनुशासनात्मक प्राधिकरण को आवेदक के खिलाफ निष्कर्ष दर्ज करने के लिए स्वतंत्र रूप से साक्ष्य का आकलन करने की आवश्यकता थी।9. न तो आरोप पत्र में मौद्रिक नुकसान का कोई आरोप है और न ही अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा कोई निष्कर्ष निकाला गया है कि

(1) 1993 (4) एस. सी. सी. 727

(2) 2005 (2) आरएसजे 362 (एससी)

(3) 1990 (2) आरएसजे 808

(4) 1991 (2) एसएलआर 675

(5) 1998 (4) आरएसजे 148

(6) 2004 (2) आरएसजे 693

(7) 1996 (1) एसएलआर 353

(8) 1995 (4) आरएसजे 289

आवेदक को कोई वित्तीय नुकसान हुआ है लेकिन फिर भी आवेदक से वसूली करने का आदेश दिया गया है।आदेश की भाषा से, यह प्रतीत होता है कि आवेदक की निलंबन अवधि को केवल इसलिए गैर-कर्तव्य माना गया है क्योंकि उस पर एक बड़ा जुर्माना लगाया गया था जैसा कि दिनांक 28.12.2004, संलग्नक ए-11 के नोटिस से स्पष्ट है।यदि कोई मामूली जुर्माना लगाया जाता है, तो शायद, प्रतिवादी को निलंबन की अवधि को नियमित करने के लिए मजबूर किया जाता क्योंकि उन्होंने कर्तव्य पर खर्च किया था।यह निर्विवाद है कि आवेदक की निलंबन अवधि को मानने के लिए, प्राधिकरण पर यह विचार करना अनिवार्य था कि निलंबन उचित था या अनुचित।हालाँकि, प्राधिकरण का विचार है कि चूंकि उस पर एक बड़ा जुर्माना लगा ए-10 दूषित है।"

(8) याचिकाआदेश्ताओं के विद्वान अधिवक्ता श्री नमित कुमार ने तर्क दिया है कि न्यायाधिआदेशण ने कानून में एक गंभीर त्रुटि की है, यह कहते हुए कि विभाग की कार्रवाई आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 के लिए भेदभावपूर्ण थी क्योंकि धोखाधड़ी मामले में आरोप की भूमिका और गंभीरता को ध्यान में रखते हुए संबंधित आदेश्मचारियों को आरोप पत्र जारी किए गए थे और बाद में श्री मुकेश कुमार सचदेवा को बर्खास्तगी की सजा दी गई थी।विद्वान वकील ने आगे तर्क दिया है कि दंड के मामले में किसी भी भेदभाव का दावा नहीं किया जा सकता है।उनके समर्पण के समर्थन में विभिन्न निर्णयों पर निर्भरता रखी गई है।

बलबीर चंद बनाम भारतीय खाद्य निगम लिमिटेड (9); सूरत सिंह बनाम पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, रोहतक (10) और अजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य (11) के मामलों में प्रस्तुत।के अनुसार

विद्वान अधिवक्ता को न्यायाधिकरण की राय है कि न तो कोई था

(9) 1997 (2) एससीटी 467 (10) 1997 (4) एससीटी 437 (11) 1997 (3) एससीटी 424

आरोप पत्र में मौद्रिक हानि का आरोप और न ही अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा उस प्रभाव का कोई निष्कर्ष पूरी तरह से गलत था क्योंकि आरोप पत्र के एक नंगे अवलोकन से पता चलता है कि आवेदक प्रतिवादी संख्या 1 के खिलाफ एक विशिष्ट आरोप यह था कि उसने धोखाधड़ी में सहायता की और विभाग को अपने कर्तव्यों के प्रदर्शन में लापरवाही के कारण '1,95,573' का नुकसान हुआ। विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी तर्क दिया गया है कि आवेदक प्रतिवादी संख्या 1 को नियमों के प्रावधानों के अनुसार सजा दी गई है और निलंबन की अवधि को गैर-कर्तव्य अवधि के रूप में मानते हुए कई दंडों के पुरस्कार के रूप में नहीं माना जा सकता है। माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए

ग्रामीण विकास आयुक्त बनाम ए. एस. जगन्नाथन का मामला

(12), यह तर्क दिया गया है कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण वेतनवृद्धि को रोकने का जुर्माना लगाते समय आरोपित कर्मचारी द्वारा हुए नुकसान की वसूली का आदेश भी दे सकता है। यह उनके निलंबन को बिना वेतन के सेवा अवधि के रूप में मानने का भी आदेश दे सकता है। यह प्रस्तुत किया गया है कि अदालतें इस आधार पर सजा के आदेश में हस्तक्षेप नहीं कर सकतीं कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने कई दंड लगाए हैं क्योंकि अनुशासनात्मक प्राधिकरण के आदेश को समग्र रूप से पढ़ा जाना चाहिए और कर्मचारी द्वारा किए गए नुकसान की वसूली के लिए लागू नियमों के तहत इसकी अनुमति है।

(9) दूसरी ओर श्री आर. के. शर्मा ने तर्क दिया है कि आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 पर केवल खाते खोलने और निकासी की अनुमति देने के साथ-साथ खातों को बंद करने के नियमों के उल्लंघन के लिए आरोप लगाया गया था और इसलिए, अन्य दो मुख्य अभियुक्तों के बराबर नहीं रखा जा सकता है जो धोखाधड़ी के मामले में वास्तविक अपराधी थे। इसलिए, लापरवाही के आरोप में उनके साथ इसी तरह के अधिकारियों के खिलाफ भेदभाव किया गया है। विद्वान वकील ने आगे तर्क दिया है कि आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 के खिलाफ कदाचार का आरोप कभी नहीं लगाया गया है। यह भी तर्क दिया गया है कि 23.2.2004 (A-10) दिनांकित आदेश में कई दंड शामिल हैं, जिनमें से एक के संबंध में आवेदक प्रतिवादी संख्या 1 पर कभी भी आरोप नहीं लगाया गया था।

(10) पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने और उनकी समर्थ सहायता के साथ अभिलेख पर सामग्री का अध्ययन करने के बाद, हमारा विचार है कि सुविधा के लिए पूरे विवाद पर निम्नलिखित चार मुद्दों के तहत चर्चा की जा सकती हैः

(1) क्या अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने पूछताछ अधिकारी द्वारा जांच रिपोर्ट में दर्ज किए गए निष्कर्षों से असहमत होते हुए 'असहमति नोट' में कारण दर्ज किए हैं?

(12) (1999) 2 एससीसी 313 793

(2) क्या आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 के साथ भेदभाव किया गया है?

(3) क्या आरोप पत्र में गबन या मौद्रिक नुकसान के एक विशिष्ट आरोप की अनुपस्थिति में में, मौद्रिक नुकसान की वसूली के लिए सजा दी जा सकती है?(4) क्या लगाए गए दंड में सजा का बंडल शामिल है?

इश्यू नं। (1)

(11) वर्तमान मामले में अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने दो अवसरों पर 'असहमति नोट' दर्ज किया है, पहले 17.1.2002 (A-4) पर और उसके बाद 6.1.2004 (A-8) पर, जब 15.3.2002 (A-6) दिनांकित पूर्व दंड आदेश और 20.12.2002 दिनांकित अपीलीय आदेश को मुख्य पोस्टमास्टर जनरल, हरियाणा सर्कल, अंबाला द्वारा दिनांकित 25.7.2003 (A-7) आदेश के माध्यम से दरकिनार कर दिया गया था।अनुशासनात्मक प्राधिकारी को आवेदक प्रतिवादी संख्या 1 को सुनवाई का अवसर देने के बाद असहमति के कारणों और अस्थायी निष्कर्षों को दर्ज करने के चरण से नए सिरे से कार्यवाही शुरू करने का निर्देश दिया गया था।इसलिए, यह देखना प्रासंगिक होगा कि क्या अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने असहमति के किसी भी कारण को दर्ज किया है या नहीं।तदनुसार, दोनों 'असहमति नोट' दिनांकित 17.1.2002 और 6.1.2004 को नीचे दिए गए रूप में जोड़ा गया हैः

असहमति ध्यान दें दिनांक 17.1.2002

असहमति ध्यान दें दिनांक 17.1.2002

" श्री दया नंद ए. पी. एम. फरीदाबाद एन. आई. टी. एच. ओ. के खिलाफ सी. सी. एस. (सी. सी. ए.) नियम-1965 के नियम-14 के तहत इस कार्यालय ज्ञापन सं. F-IV/1/97-98 डिस्क।II दिनांक 27.3.98 और श्री पी. सी. प्रतिहारी को उक्त श्री दया नंद के खिलाफ आरोपों की जांच के लिए आई. ओ. के रूप में नियुक्त किया गया था।श्री प्रतिहारी ने नियम-14 आई. बी. आई. डी. में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार पूछताछ की और 14.7.2000 पर हाथ से प्राप्त अपनी जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की।मैंने जांच रिपोर्ट को सावधानीपूर्वक और निष्पक्षता द्वारा देखा है और जांच रिपोर्ट में किए गए गहन अध्ययन द्वारा पता चलता है

" श्री दया नंद ए. पी. एम. फरीदाबाद एन. आई. टी. एच. ओ. (अब पी. ए. सेक्टर-7 पी. ओ. फरीदाबाद) के खिलाफ सी. सी. एस. (सी. सी. ए.) नियम-1965 के नियम-14 के तहत इस कार्यालय ज्ञापन सं. एफ-IV/1/97-98/डिस्क।II दिनांक 27.3.98 और श्री पी. सी. प्रतिहारी को उक्त श्री दया नंद के खिलाफ आरोपों की जांच के लिए आई. ओ. के रूप में नियुक्त किया गया था।श्री प्रतिहारी ने नियम-14 आई. बी. आई. डी. में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार जांच की और 14.7.2000 पर हाथ से प्राप्त अपनी जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की।मैंने जांच रिपोर्ट को ध्यान द्वारा देखा है और

कि जाँच प्राधिकरण ने जाँच के दौरान प्रस्तुत किए गए साक्ष्य की सराहना किए बिना आरोपित अधिकारी को आरोपों से बरी कर दिया।इसलिए मैं निम्नलिखित कारणों से जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत हूं।

जांच रिपोर्ट में किए गए निष्पक्ष और गहन अध्ययन से पता चलता है कि जांच प्राधिकरण ने जांच के दौरान पेश किए गए सबूतों की सराहना किए बिना आरोपी अधिकारी को आरोपों से मुक्त कर दिया।अधोहस्ताक्षरकर्ता ने इस कार्यालय पत्र संख्या के माध्यम से आरोपित अधिकारी को एक ध्यान दें दिया था। एफ-IV/1/97-98/डिस्क-II दिनांक 19.11.2003 कि मैं आई. ओ. के निष्कर्षों से असहमत होने का प्रस्ताव करता हूं। इस पर आरोपित अधिकारी ने अपने दिनांक 13.12.2003 के पत्र के माध्यम से जवाब दिया, मैंने श्री दया नंद के प्रतिनिधित्व पर सावधानीपूर्वक विचार किया है।हालांकि, मैं जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत हूं और मेरा असहमति ध्यान दें इस प्रकार हैः- "अभियुक्त अधिकारी ने अपने बयान दिनांक 17.10.97 Ex में कहा। श्री लेहना सिंह (एस. डब्ल्यू.-1) और श्री जी. डी. गुप्ता (एस. डब्ल्यू.-9) की उपस्थिति में दर्ज एस-14 ने निम्नलिखित को स्वीकार किया है।(i) कि विचाराधीन इन पास बुक को 18.3.97 पर हाथ से निपटाया गया था क्योंकि इसकी प्राप्तियों/हस्तांतरण का आधिकारिक रिकॉर्ड उनके कार्यालय में नहीं मिला था।

अभियुक्त अधिकारी ने अपने बयान दिनांक 17.10.97 Ex में कहा। श्री लेहना सिंह एस. डब्ल्यू.-1 और श्री जी. डी. गुप्ता एस. डब्ल्यू.-9 की उपस्थिति में दर्ज एस-14 ने निम्नलिखित को स्वीकार किया है।

I. कि विचाराधीन इन पास बुक को हाथ से निपटाया गया था

आधिकारिक रिकॉर्ड के रूप में 18.3.97 पर

इसकी प्राप्तियाँ/हस्तांतरण थे

उनके कार्यालय में नहीं मिला।

II. इसके अलावा इसके हस्तांतरण की प्रविष्टि केवल नमूने में की गई थी।

हस्ताक्षर पुस्तिका और आर. डी. में नहीं

नियम के अनुसार पत्रिका।

III. आरोपित अधिकारी ने यह भी स्वीकार किया कि भुगतान

श्री मुकेश को बनाया गया था

कुमार सचदेवा (मुख्य)

अपराधी) और नहीं

18.3.97 पर जमाकर्ता और

(ii) इसके अलावा इसके हस्तांतरण की प्रविष्टि केवल नमूना हस्ताक्षर पुस्तिका में की गई थी और नियम के अनुसार आर. डी. पत्रिका में नहीं।

31.3.97.

IV. अभियुक्त अधिकारी ने रुपये का मामला स्थानांतरित कर दिया।

60,000/- और 1,35573/- पर

(iii) आरोपित अधिकारी ने यह भी स्वीकार किया कि भुगतान श्री मुकेश कुमार सचदेवा (मुख्य अपराधी) को किया गया था न कि 18.3.97 और 31.3.97 पर जमाकर्ता को।

18.3.97 और 31.3.97

क्रमशः श्री महावीर को

पी. ए. बिना रसीद लिए।V. आरोपित अधिकारी ने आगे स्वीकार किया कि अंतिम मंजूरी

विचाराधीन पास पुस्तकों में से

(iv) आरोपित अधिकारी ने रुपये का मामला स्थानांतरित कर दिया। श्री महावीर पी. ए. को उसकी रसीद लिए बिना क्रमशः 60,000/- और 1,35573/- 18.3.97 और 31.3.97 पर।(v) आरोपित अधिकारी ने आगे स्वीकार किया कि विचाराधीन पास बुक की अंतिम मंजूरी 31.3.97 पर SO पर्ची द्वारा से आधिकारिक चैनल द्वारा से प्राप्त करने के बजाय मुकेश कुमार सचदेवा PA (मुख्य अपराधी) द्वारा से हाथ से प्राप्त की गई थी।

हाथ द्वारा प्राप्त किया गया था

मुकेश कुमार सचदेवा पीए

(मुख्य अपराधी) के बजाय

अधिकारी द्वारा से प्राप्त करना

एस. ओ. स्लिप ऑन द्वारा से चैनल

31.3.97.

उपरोक्त सभी बिंदु मुख्य अपराधी के साथ अभियुक्त अधिकारी की मिलीभगत का संकेत देते हैं और दर्शाते हैं और यह भी दर्शाता है कि अभियुक्त अधिकारी की ओर से सी. सी. एस. (आचरण) नियम-1964 के नियम 3 (1) (i), 3 (I) (II), 1 (I) (III) का उल्लंघन किया गया है।इसलिए, मैं सी. ओ. के खिलाफ बनाए गए आरोपों के अनुच्छेद को जांच प्राधिकरण द्वारा साबित नहीं किए जाने के बजाय पूरी तरह से साबित मानता हूं।

उपरोक्त सभी बिंदु सी. सी. एस. (आचरण) नियम-1964 के नियम 3 (1) (i), नियम 3 (I) (ii) और नियम 3 (I) (iii) की ईमानदारी की कमी और उल्लंघन का संकेत देते हैं।इसलिए, मैं आरोपित अधिकारी के खिलाफ बनाए गए आरोपों के अनुच्छेद को जांच प्राधिकरण द्वारा 'साबित नहीं' किए जाने के बजाय पूरी तरह से साबित मानता हूं।अभियुक्त अधिकारी को जाँच रिपोर्ट पहले ही दे दी गई है, इस कार्यालय पत्र के माध्यम से दिनांकित संख्या 17.01.2002 भी है।श्री दया नंद एस. पी. एम. एन. एच.-2 अब पी. ए. फरीदाबाद को

15 दिनों के भीतर उपरोक्त निष्कर्षों के साथ-साथ अपनी जांच रिपोर्ट में जांच प्राधिकरण के निष्कर्षों के खिलाफ, यदि कोई प्रतिनिधित्व करने का अवसर दिया जाता है। यदि निर्धारित अवधि के भीतर कोई अभ्यावेदन प्राप्त नहीं होता है, तो अभियुक्त अधिकारी के अभ्यावेदन की प्रतीक्षा किए बिना मामले का निर्णय लिया जाएगा।

श्री दया नंद एस. पी. एम. एन. एच.-2 अब पी. ए. फरीदाबाद एन. आई. टी. एच. ओ. को 15 दिनों के भीतर अपनी जांच रिपोर्ट में उपरोक्त निष्कर्षों के साथ-साथ जांच प्राधिकरण के निष्कर्षों के खिलाफ यदि कोई प्रतिनिधित्व करने का अवसर दिया जाता है। यदि निर्धारित अवधि के भीतर कोई अभ्यावेदन प्राप्त नहीं होता है, तो अभियुक्त अधिकारी के अभ्यावेदन की प्रतीक्षा किए बिना मामले का निर्णय लिया जाएगा।

(12) उपरोक्त 'असहमत टिप्पणियों' के एक नंगे अवलोकन से पता चलता है कि वे शब्दशः समान हैं। वास्तव में, अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने दूसरी बार 'असहमति नोट' तैयार करते समय पूछताछ अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों से भिन्न होने का कोई कारण दर्ज करने की जहमत नहीं उठाई। इस मुद्दे पर कानून अच्छी तरह से तय किया गया है। नियमों के नियम 15 में अनुशासनात्मक प्राधिकरण के स्वयं जांच प्राधिकरण नहीं होने की स्थिति में जांच रिपोर्ट पर की जाने वाली कार्रवाई पर विचार किया गया है। नियम 15 के उप-नियम (1) के अनुसार, अनुशासनात्मक प्राधिकरण लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए मामले को आगे की जांच के लिए जांच प्राधिकरण को भेज सकता है और जांच प्राधिकरण नियम 14 के प्रावधानों के अनुसार आगे की जांच करने के लिए बाध्य है। हालांकि, नियम 15 का उप-नियम (2) एक ऐसी स्थिति से संबंधित है जब अनुशासनात्मक प्राधिकरण आरोप के लेखों पर पूछताछ अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होना पसंद करता है। ऐसी स्थिति में, अनुशासनात्मक प्राधिकरण इस तरह की असहमति के लिए अपना कारण दर्ज करने के लिए बाध्य है और फिर इस तरह के आरोप पर अपने स्वयं के निष्कर्ष दर्ज करता है यदि रिकॉर्ड पर साक्ष्य इस उद्देश्य के लिए 'पर्याप्त' है। नियमों का नियम 15 इस प्रकार हैः

"15. जांच रिपोर्ट पर कार्रवाई

(1) अनुशासनात्मक प्राधिकारी, यदि वह स्वयं जांच करने वाला प्राधिकारी नहीं है, तो उसके द्वारा लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए, मामले को आगे की जांच और रिपोर्ट के लिए जांच करने वाले प्राधिकारी को भेज सकता है और उसके बाद जांच करने वाला प्राधिकारी नियम 14 के प्रावधानों के अनुसार आगे की जांच करने के लिए आगे बढ़ेगा।

(1-क) अनुशासनात्मक प्राधिकारी अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा आयोजित जांच की रिपोर्ट, यदि कोई हो, या जहां अनुशासनात्मक प्राधिकारी जांच प्राधिकारी नहीं है, की एक प्रति सरकारी कर्मचारी को भेजेगा या भेजेगा, जिसे पंद्रह दिनों के भीतर अनुशासनात्मक प्राधिकारी को अपना लिखित अभ्यावेदन या प्रस्तुत करने की आवश्यकता होगी, चाहे रिपोर्ट सरकारी कर्मचारी के पक्ष में हो या नहीं।

(1-ख) अनुशासनात्मक प्राधिकारी उप-नियम (2) से (4) में निर्दिष्ट तरीके से आगे बढ़ने से पहले सरकारी कर्मचारी द्वारा प्रस्तुत अभ्यावेदन, यदि कोई हो, पर विचार करेगा।

(2) अनुशासनात्मक प्राधिकारी, यदि वह किसी आरोप के लेख पर पूछताछ प्राधिकरण के निष्कर्षों से असहमत है, तो ऐसी असहमति के लिए अपने कारणों को दर्ज करेगा और ऐसे आरोप पर अपने स्वयं के निष्कर्ष दर्ज करेगा यदि साक्ष्य रिकॉर्ड इस उद्देश्य के लिए पर्याप्त है।(जोर दिया गया)

XXXXXXXXX

(4) यदि अनुशासनात्मक प्राधिकारी सभी या किसी आरोप-पत्र पर अपने निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए और जांच के दौरान प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर यह राय रखता है कि नियम 11 के खंड (v) से (ix) में निर्दिष्ट दंडों में से कोई भी सरकारी कर्मचारी पर लगाया जाना चाहिए, तो वह ऐसा दंड लगाने का आदेश देगा और सरकारी कर्मचारी को लगाए जाने वाले प्रस्तावित दंड पर प्रतिनिधित्व करने का कोई अवसर देना आवश्यक नहीं होगाः

बशर्ते कि प्रत्येक मामले में जहां आयोग से परामर्श करना आवश्यक है, जांच का रिकॉर्ड अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा आयोग को उसकी सलाह के लिए भेजा जाएगा और सरकारी कर्मचारी पर ऐसा कोई जुर्माना लगाने का आदेश देने से पहले ऐसी सलाह पर विचार किया जाएगा।" (13) दिनांक 6.1.2004 (ए-8) के 'असहमति नोट' के खाली अवलोकन पर यह पेटेंट बन जाता है कि नियमों के नियम 15 के उप-नियम (2) की आवश्यक आवश्यकता का पालन नहीं किया गया है।जांच प्राधिकरण के निष्कर्ष के साथ असहमति के मामले में अनुशासनात्मक प्राधिकरण को असहमति के अपने कारणों को दर्ज करने की आवश्यकता थी और फिर इस उद्देश्य के लिए रिकॉर्ड पर साक्ष्य पर्याप्त होने की स्थिति में ऐसे आरोप पर अपना निष्कर्ष दर्ज करना अनिवार्य था। अनुशासनात्मक प्राधिकरण पर लगाया गया दायित्व अधिक भारी है क्योंकि अभिलेख पर साक्ष्य ऐसी किसी भी असहमति पर निष्कर्ष को बनाए रखने के लिए 'पर्याप्त' होना चाहिए, जिसे अनुशासनात्मक प्राधिकरण दर्ज करने के लिए आगे बढ़ सकता है।आम तौर पर आरोप को बनाए रखने के लिए पर्याप्तता और साक्ष्य की अपर्याप्तता एक ऐसा प्रश्न होगा जिसमें जाने की आवश्यकता नहीं होगी, लेकिन नियम अनुशासनात्मक प्राधिकारी पर एक आरोप पर निष्कर्ष दर्ज करने का दायित्व लगाता है जहां वह केवल तभी असहमति व्यक्त करता है जब रिकॉर्ड पर साक्ष्य उस उद्देश्य के लिए 'पर्याप्त' हो।यह इस कारण से हो सकता है कि एक बार पूछताछ करने वाले प्राधिकरण ने एक या दूसरे तरीके से निष्कर्ष निकाला है तो उन निष्कर्षों को उलटने के लिए पर्याप्त सबूत की आवश्यकता होगी।इसलिए,

कमजोर साक्ष्य पर निष्कर्षों को उलट नहीं किया जा सकता है।इस निष्आदेष पर पहुंचने के लिए कि असहमति के समर्थन में आरोप को बनाए रखने के लिए पर्याप्त सबूत हैं, कुछ भी सबूत नहीं है जिसे चर्चा का हिस्सा बनाया गया है।तत्काल मामला अनुशासनात्मक प्राधिकरण द्वारा दिमाग के पूर्ण गैर-अनुप्रयोग की एक निराशाजनक तस्वीर प्रस्तुत करता है।आरोपों को बनाए रखने के लिए वस्तुतः कोई सबूत पर चर्चा नहीं की गई है और न ही इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कोई तर्क अपनाया गया है कि आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 उन आरोपों का दोषी है।

(14) हमारे सामने जो सवाल उठाया गया है, उस पर माननीय उच्चतम न्यायालय ने पंजाब नेशनल बैंक बनाम कुंज बिहारी मिश्रा (13) के मामले में भी विचार किया है।उनके प्रभुओं द्वारा तैयार किया गया विशिष्ट प्रश्न इस प्रकार हैः-

"जब जांच अधिकारी, अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान, इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि किसी अधिकारी के खिलाफ कदाचार का आरोप लगाने वाले सभी या कुछ आरोप साबित नहीं होते हैं, तो अनुशासनात्मक प्राधिकरण उससे अलग हो सकता है और अपचारी अधिकारी को कोई अवसर दिए बिना एक विपरीत निष्कर्ष दे सकता है।"

(15) उपरोक्त दृष्टिकोण का पालन किया गया है और एस. बी. आई बनाम अरविंद के. शुक्ला (14) के मामले में भी लागू किया गया है।इसलिए, वैधानिक नियम, सिद्धांत और पूर्ववर्ती के आधार पर कोई संदेह नहीं छोड़ा जाता है कि अनुशासनात्मक प्राधिकरण को जांच अधिकारी के निष्कर्षों से असहमत होने से पहले आरोपों को बनाए रखने के लिए पर्याप्त सबूतों को देखने के बाद कारण दर्ज करने चाहिए थे।अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा 6.1.2004 पर दर्ज असहमति ध्यान दें (ए -8) यह नियमों की आवश्यक आवश्यकता को पूरा करने से बहुत दूर है।इसलिए, असहमति ध्यान दें के साथ-साथ उस पर आधारित बाद की कार्यवाही को दरकिनार किया जा सकता है।

इश्यू नं। (2)

(16) न्यायाधिकरण के समक्ष आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 का मामला था कि 15 डाकघरों में धोखाधड़ी की गई थी और अधिकारियों को समान आरोपों वाले नियमों के नियम 16 के तहत आरोप पत्र जारी किए गए थे, जबकि उन पर नियमों के नियम 14 के तहत आरोप पत्र दायर किया गया था।न्यायाधिकरण

(13) 1998 (7) एससीसी 84 (14) 2004 (13) एससीसी 797

भेदभाव के इस मुद्दे पर याचिकाकर्ताओं द्वारा किसी विशिष्ट उत्तर की अनुपस्थिति में में उनके खिलाफ एक प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला गया है, जैसा कि ऊपर पैरा 7 में पहले ही देखा जा चुका है।इस न्यायालय के समक्ष भी, याचिकाकर्ता आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 और अन्य आरोपित कर्मचारियों के खिलाफ लगाए गए आरोपों के बीच कोई अंतर दिखाने वाली कोई सामग्री रिकॉर्ड पर नहीं रख पाए समर्थ।तदनुसार, हम पाते हैं कि न्यायाधिकरण सही निष्कर्ष पर पहुंचा है कि आवेदक प्रतिवादी संख्या 1 भी इसी तरह के व्यवहार का हकदार था।इस प्रकार, याचिकाकर्ताओं का यह तर्क कि आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा कोई भेदभाव नहीं किया गया था, आधार नहीं रखता है।

इश्यू नं। (3)

(17) एम. वी. बिजलानी बनाम भारत संघ (15) के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के फैसले पर आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा रिलायंस को रखा गया है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जिन आरोपों के संबंध में अपचारी अधिकारी पर आरोप नहीं लगाया गया था, ऐसे आरोप पर कोई सजा नहीं दी जा सकती थी।निर्णय के पैरा 23 में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की हैः

"जाहिर है, जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए साक्ष्य और उनके द्वारा निकाले गए निष्कर्ष आरोपों के अनुरूप नहीं थे।यदि यह दुरुपयोग या गबन का मामला था, तो अपीलकर्ता को इसके बारे में विशेष रूप से बताया जाना चाहिए था।उचित आरोप तय किए बिना इस तरह के गंभीर आरोप की जांच नहीं की जा सकती थी।"

(18) इसलिए, वर्तमान मामले में जब आरोप-पत्र में न तो मौद्रिक नुकसान का कोई आरोप था और न ही अनुशासनात्मक प्राधिआरोप-पत्रण द्वारा कोई निष्आरोप-पत्रष निकाला गया था कि आवेदक प्रतिवादी संख्या 1 ने दुरुपयोग किया था, तो वसूली लगाने वाली सजा कानून की नजर में अस्थिर है।

इश्यू नं। (4)

(19) जहां तक चौथे मुद्दे का संबंध है, यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि दिनांक 1 (ए-10) के आदेश के अनुसार वेतन के समय पैमाने में 5,875/- से 5,750/- तक एक चरण की कमी का जुर्माना

(15) जेटी 2006 (4) एससी 469

वेतनवृद्धि की तारीख से तीन महीने की अवधि के लिए '4500-125-7000' लागू किया गया है। उन्हें कटौती की अवधि के दौरान वेतन वृद्धि अर्जित करने से रोक दिया गया था और उसी आदेश में दस महीने की अवधि के लिए मूल वेतन के एक चौथाई की वसूली का एक और जुर्माना लगाया गया है। दूसरे शब्दों में, आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 पर दो दंड लगाए गए हैं, जो हमारी राय में दंड के बंडल के बराबर है। इस संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय के पैरा 12 में की गई निम्नलिखित टिप्पणियों पर भरोसा किया जा सकता है।

भारत संघ बनाम एस. सी. पाराशर (16) का मामलाः

"इसलिए, हमारी राय में, अनुशासनात्मक प्राधिकरण ने एक ही आदेश द्वारा मामूली और बड़े दोनों दंड लगाने में अवैध रूप से और अधिकार क्षेत्र के बिना काम किया। इस तरह की कार्रवाई कानूनी रूप से नहीं की जा सकती थी।" इसलिए, याचिकाकर्ता-प्रतिवादी संख्या 1 पर दंड का बंडल लगाने के लिए याचिकाकर्ताओं द्वारा की गई कार्रवाई कानूनी रूप से गलत है।

(20) हम एक असहमति ध्यान दें दर्ज करने के चरण से नए सिरे से आगे बढ़ने के उद्देश्य से मामले को अनुशासनात्मक प्राधिकरण को वापस भेज देते। हालाँकि, विभिन्न कारणों से उपरोक्त पाठ्यक्रम को नहीं अपनाया गया है। आरोप वर्ष 1997 से संबंधित हैं और आरोप पत्र लगभग तेरह साल पहले जारी किया गया था। पहले से ही बहुत समय बर्बाद हो चुका है। इसके अलावा, पुनरीक्षण प्राधिकरण ने स्वयं मामले को 25.7.2003 पर नई कार्यवाही के लिए अनुशासनात्मक प्राधिकरण को नए सिरे से भेज दिया है जो लगभग आठ साल पहले भी था। इसलिए, मामले को अधिकारियों को वापस भेजने से कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा नहीं होगा। याचिकाकर्ताओं के लिए विद्वान अधिवक्ता जांच अधिकारी की रिपोर्ट से यह दिखाने में समर्थ नहीं है कि आवेदक-प्रतिवादी संख्या 1 को अभ्यारोपित करने के लिए पर्याप्त कोई आपत्तिजनक सबूत है, जो उसके खिलाफ निष्कर्ष दर्ज करने का आधार हो सकता है। इसलिए, यह चीजों की योग्यता में होगा यदि मामले को इस स्तर पर ही अंतिम रूप दिया जाए।

(21) उपरोक्त चर्चा की अगली कड़ी के रूप में, हम न्यायाधिकरण द्वारा इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की गारंटी देने वाले दृष्टिकोण में कोई कानूनी दुर्बलता नहीं पाते हैं। तत्काल याचिका में योग्यता का अभाव है और तदनुसार इसे खारिज कर दिया जाता है। लागत के बारे में कोई आदेश नहीं।

वी. सूरी

(16) जेटी 2000 (3) एससी 162

अस्वीकरण:- स्थानिया भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सिमित प्रयोग के लिए है ताकि अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इस का उपयोग नहीं किया जा सकता। सभी व्हावीरिक एवं आधारिक उद्येश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण परमानिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

gurvinder kaur